Ll.b.
2semester
Legal history.

उच्च न्यायालय अधिनियम, 1861
(High Court Act, 1861)

उद्देश्य
Object
न्याय प्रशासन का एकीकरण
Unification of Administration of Justice

उच्च न्यायालय की संरचना
Composition of High Court

मुख्य न्यायाधीश
Chief Justice
+
15 सहायक न्यायाधीश
(15 Assistant Justice)

अहर्ताएँ
(Qualification)

(a) पाँच वर्ष के अनुभव वाले बेरिस्टर
(Barristers of five years standing Practice)

(b) केबिनेटेड सर्विस के कर्मचारी (10 साल के अनुभवी)
(Covenanted Servants of company)
(Completed 10 years Service)

(c) वकील वर्ग सदर अदालत या उच्चतम न्यायालय
(Advocates from Sadar Adalat or Supreme Court)

(d) अधीनस्थ न्यायालयों के न्यायाधीश (पाँच साल का अनुभव)
(Judges of Subordinate Courts 5 years experience)

उच्च न्यायालयों की स्थापना (भारतीय उच्च न्यायालय अधिनियम, 1861)

Establishment of High Courts (Indian High Court Act, 1861)

सन् 1861 के भारतीय उच्च न्यायालय अधिनियम के अन्तर्गत स्थापित उच्च न्यायालयों से पूर्व ब्रिटिश भारत में दोहरी न्याय व्यवस्था कार्यरत थी। ब्रिटिश भारत का न्याय प्रशासन दो क्षेत्रों (1) प्रेसीडेन्सी नगरों (मद्रास, बम्बई एवं कलकत्ता) तथा (2) मौफ्फसिल क्षेत्रों में विभक्त था।

प्रेसीडेन्सी नगरों में ब्रिटिश सम्राट् द्वारा स्थापित उच्चतम न्यायालय थे, जिन्हें ब्रिटिश सम्राट् ने ब्रिटिश-संसद द्वारा प्रदत्त अधिकारों के अन्तर्गत स्थापित किया था। मौफ्फसिल क्षेत्रों में कम्पनी के न्यायालय (अदालतें) कार्यरत थे, जिन्हें कम्पनी द्वारा स्थापित किया गया था। यह दोनों न्याय व्यवस्था मिलकर दोहरी न्याय व्यवस्था का निर्माण करते थे।

इन दोनों प्रकार के न्यायालयों की संरचना, क्षेत्राधिकार एवं शक्तियाँ एक-दूसरे से बिल्कुल भिन्न थी। इनको प्राप्त शक्तियों का स्रोत भी भिन्न था।

प्रेसीडेन्सी नगरों में कार्यरत उच्चतम न्यायालयों का स्रोत ब्रिटिश सम्राट् द्वारा जारी किये गये राजपत्र एवं ब्रिटिश संसद द्वारा पारित अधिनियम थे। मौफ्फसिल क्षेत्रों के न्यायालयों का स्रोत कम्पनी के विनियम थे। उच्चतम न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति एवं उनके कार्यकाल का निर्धारण ब्रिटिश सम्राट् द्वारा किया जाता था। न्यायाधीशों की नियुक्ति विधि में पारंगत व्यक्तियों (बेरिस्टरों) में से की जाती थी।

कम्पनी अदालतों के न्यायाधीशों की नियुक्ति कम्पनी के कर्मचारियों में से कम्पनी सरकार के द्वारा की जाती थी। इनका कार्यकाल भी सरकार पर निर्भर होता था। ये विधि में पारंगत विधिवेत्ता नहीं होते थे।

उच्चतम न्यायालय का क्षेत्राधिकार सम्बन्धित प्रेसीडेन्सी, मौफ्फसिल क्षेत्र में निवास करने वाली ब्रिटिश प्रजा तथा कम्पनी के कर्मचारियों पर था।

मौफ्फसिल क्षेत्रों में सदर दीवानी तथा सदर फौजदारी अदालत उच्च अदालतें थीं। इन क्षेत्रों की अदालतों की स्थापना भारतवासियों के लिए की गई थी।

उच्चतम न्यायालय द्वारा अंग्रेजी विधि तथा अंग्रेजी न्यायिक प्रक्रिया का प्रयोग किया जाता था। यह एक मौलिक क्षेत्राधिकार वाला न्यायालय था, इसे राजस्व सम्बन्धित वादों में तथा अपीलीय क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं थे।

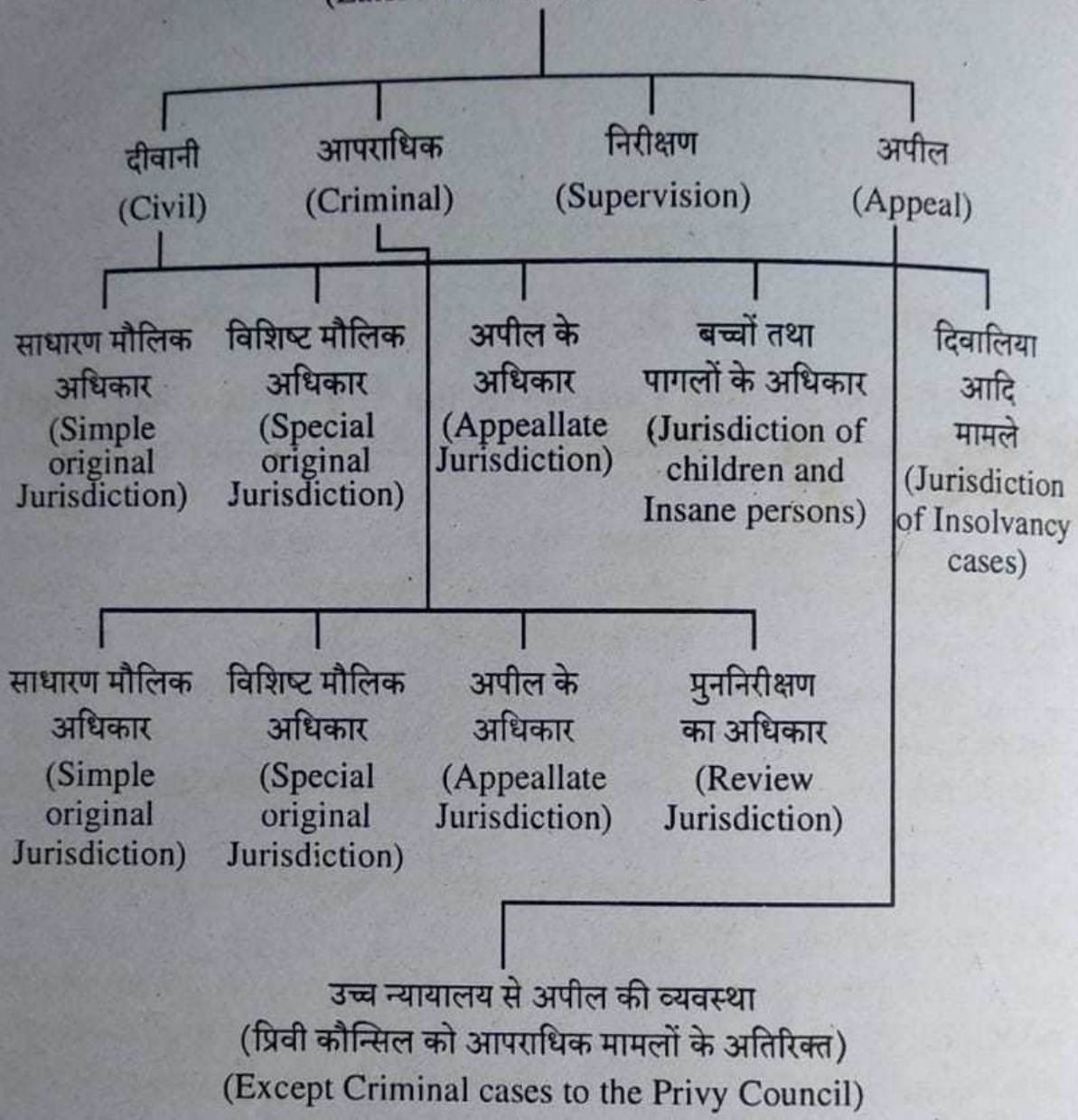

लेटर पेटेन्ट के न्यायाधिकार
(Later Patent's Judicial Rights)
दीवानी
(Civil)
आपराधिक
(Criminal)
निरीक्षण
(Supervision)
अपील
(Appeal)
साधारण मौलिक अधिकार
(Simple original Jurisdiction)
विशिष्ट मौलिक अधिकार
(Special original Jurisdiction)
अपील के अधिकार
(Appeallate Jurisdiction)
बच्चों तथा पागलों के अधिकार
(Jurisdiction of children and Insane persons)
दिवालिया आदि मामले
(Jurisdiction of Insolvancy cases)
साधारण मौलिक अधिकार
(Simple original Jurisdiction)
विशिष्ट मौलिक अधिकार
(Special original Jurisdiction)
अपील के अधिकार
(Appeallate Jurisdiction)
पुनर्निरीक्षण का अधिकार
(Review Jurisdiction)
उच्च न्यायालय से अपील की व्यवस्था
(प्रिवी कौन्सिल को आपराधिक मामलों के अतिरिक्त)
(Except Criminal cases to the Privy Council)

कम्पनी की अदालतों में भारतीयों की व्यक्तिगत विधि (हिन्दू और मुसलमानों की) द्वारा वादों को निर्णीत किया जाता था। इसके अभाव में न्याय, साम्य एवं सद्विवेक के सिद्धान्त के अनुसार निर्णय दिया जाता था। ये अपीलीय न्यायालय थे।

उच्चतम न्यायालय सन् 1833 से पूर्व सरकार के उन्हीं विनियमों से बाध्य था जिनका न्यायालय में पंजीकरण (Regulate) करवा दिया गया हो।

कम्पनी की अदालतें सरकार के सभी विनियमों से बाध्य थीं।

सन् 1833 के पश्चात् सभी न्यायालयों को (उच्चतम न्यायालय संहिता सपरिषद्-महाराज्यपाल (सरकार) द्वारा निर्मित अधिनियमों को मानना आवश्यक था।

दोनों ही क्षेत्रों के न्यायालयों से अपील प्रिवी कौन्सिल में की जा सकती थी।

इस प्रकार ब्रिटिश भारत में दो एक-दूसरे से भिन्न एवं स्वतन्त्र न्याय व्यवस्था प्रचलित थी। दोहरी न्याय व्यवस्था के प्रचलन से काफी कठिनाईयाँ उत्पन्न हुईं। दोनों ही क्षेत्राधिकार के प्रश्न को लेकर टकराती रहती थीं। उच्चतम न्यायालय का क्षेत्राधिकार परिभाषित नहीं था। दोनों न्याय प्रशासन का आपसी सम्बन्ध तनावपूर्ण था तथा इनका आपस में क्षेत्राधिकार को लेकर संघर्ष भी चलता रहता था, जिससे अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो गई। उच्चतम न्यायालय का क्षेत्राधिकार अनिश्चित था जिसके कारण यह कभी-कभी मौफ्फसिल क्षेत्रों के निवासियों पर अपना क्षेत्राधिकार आरोपित कर देता था तो कभी-कभी कम्पनी के न्यायालयों द्वारा पारित पूर्व डिक्रियों में हस्तक्षेप कर देता था। इस प्रकार डिक्रियों के निष्पादन में कठिनाई उत्पन्न होती थी। उच्चतम न्यायालय का मानना था कि उसका क्षेत्राधिकार प्रेसीडेन्सी के निवासियों पर ही नहीं, बल्कि उस क्षेत्र से बाहर के निवासियों की सम्पत्ति पर भी था, जो उसके क्षेत्र में थी तथा उनके व्यापारिक एजेन्ट जो उसके क्षेत्र में रहते हैं उन पर भी उसका क्षेत्राधिकार था।

इस स्थिति में कम्पनी की अदालत भी इन पर अपने क्षेत्राधिकार का दावा करती थी; क्योंकि ये निवासी मौफ्फसिल क्षेत्र के थे। दूसरा यदि व्यक्ति प्रेसीडेन्सी नगर का वासी है और उसकी सम्पत्ति मौफ्फसिल क्षेत्र में है तब भी दोनों ही न्यायालय अपने-अपने क्षेत्राधिकार का दावा करते थे। इस प्रकार एक ही व्यक्ति के सम्पत्तियों से सम्बन्धित दावे में दोनों अदालतों द्वारा भिन्न-भिन्न निर्णय दे दिये जाते थे।

इस दोहरी न्याय व्यवस्था के कारण अव्यवस्था तथा भ्रान्ति की स्थिति उत्पन्न हो गई थी। इस स्थिति को समाप्त करना आवश्यक हो गया था अतः दोहरी न्याय व्यवस्था को मुख्य न्यायाधीश तथा विलियम बेन्टिक ने समाप्त करने की आवश्यकता पर जोर दिया था।

इस कार्य में सबसे प्रमुख कठिनाई थी दोनों प्रकार के न्यायालयों में प्रयुक्त होने वाली विधि तथा प्रक्रिया में भिन्नता। यह आवश्यक समझा गया कि इनके एकीकरण के लिए न्याय प्रशासन में आवश्यक परिवर्तन किये जाएँ।

इसके लिए पहला कदम सन् 1833 में अखिल भारतीय विधान मण्डल (All India Legislative Council) की स्थापना करके उठाया गया। इसके द्वारा निर्मित अधिनियम सभी न्यायालयों पर बाध्य थे चाहे वे कम्पनी के न्यायालय हों और चाहे सम्राट् के न्यायालय। इस प्रकार विधि के मामले में एकरूपता लाई गयी। भारतीय विधियों के संहिताकरण हेतु सन् 1833 में प्रथम विधि आयोग की भी स्थापना की गई।

सन् 1853 के अधिनियम के अन्तर्गत इन दोनों प्रकार की न्याय व्यवस्था के एकीकरण के लिए एक और प्रयास किया गया। इस अधिनियम के अन्तर्गत द्वितीय विधि आयोग की नियुक्ति की गई, जिसका प्रथम दायित्व था उच्चतम न्यायालय तथा सदर अदालतों के एकीकरण की योजना तैयार करना। यह योजना किन्हीं कारणों से लागू नहीं की जा सकी।

सन् 1858 में ब्रिटिश भारत का शासन कम्पनी की समाप्ति के साथ ब्रिटिश सम्राट् को हस्तान्तरित हो गया। परिणामस्वरूप अब कम्पनी के एवं सम्राट् के न्यायालयों का भेद समाप्त हो गया।

इसी समय दीवानी एवं आपराधिक प्रक्रिया संहिताएँ तथा भारतीय दण्ड संहिता भी संहिताबद्ध हो गई थी। जिससे इन न्यायालयों के एकीकरण का रास्ता भी सुगम हो गया। ये संहिताएँ समान रूप से ब्रिटिश-भारत के निवासियों पर लागू होती थीं।

इस प्रकार दोहरी न्याय व्यवस्था के एकीकरण की पृष्ठभूमि तैयार हो चुकी थी; परन्तु इनका एकीकरण सन् 1861 में भारतीय उच्च न्यायालय अधिनियम, 1861 (Indian High Court Act, 1861) को ब्रिटिश संसद द्वारा पारित किये जाने पर पूर्ण हो सका।

इस अधिनियम के द्वारा उच्चतम न्यायालय एवं सदर अदालतों (सदर दीवानी एवं सदर फौजदारी अदालत) को मिलाकर उच्च न्यायालय (High Court) की स्थापना की गई।

भारतीय उच्च न्यायालय अधिनियम, 1861
(Indian High Court Act, 1861)

मुख्य प्रावधान

(1) उद्देश्य दोहरी न्याय व्यवस्था की समाप्ति–16 अगस्त सन् 1861 में ब्रिटिश संसद द्वारा भारतीय उच्च न्यायालय अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम का उद्देश्य ब्रिटिश भारत में कार्यरत दोहरी न्याय व्यवस्था को समाप्त करके न्याय प्रशासन में सुधार करना था। परिणामस्वरूप इस अधिनियम में उच्चतम न्यायालयों तथा सदर अदालतों को समाप्त करके उनके स्थान पर प्रत्येक प्रेसीडेन्सी नगर (मद्रास, बम्बई एवं कलकत्ता) में एक-एक उच्च न्यायालय की स्थापना करने का प्रावधान किया गया।

इस अधिनियम द्वारा उच्च न्यायालयों की स्थापना नहीं की गई थी; बल्कि ब्रिटिश सम्राट् को प्रत्येक प्रेसीडेन्सी नगर में एक उच्च न्यायालय स्थापित करने की शक्ति प्रदान की गई थी।

उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति उनकी अर्हताओं तथा न्यायालय के क्षेत्राधिकार आदि के प्रावधान इस अधिनियम में ही कर दिये गये थे।

ब्रिटिश सम्राट् ने अधिनियम द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए लेटर-पेटेन्ट जारी करके प्रत्येक प्रेसीडेन्सी नगर तथा पश्चिमोत्तर प्रान्त के किये भी उच्च न्यायालय की स्थापना का प्रावधान किया।

सन् 1861 के अधिनियम के प्रावधान–सन् 1861 के अधिनियम द्वारा प्रावधान किया गया कि प्रत्येक उच्च न्यायालय में एक मुख्य न्यायाधीश तथा अधिक से अधिक 15 अन्य न्यायाधीश होंगे।

न्यायाधीशों की संख्या ब्रिटिश-सम्राट् की इच्छा पर निर्भर थी; परन्तु यह संख्या 5 से अधिक नहीं हो सकती थी।

1. न्यायाधीशों की नियुक्ति–

(1) मुख्य न्यायाधीश तथा 1/3 न्यायाधीशों की नियुक्ति कम से कम पाँच वर्ष के बेरिस्टर के अनुभव प्राप्त बेरिस्टरों में से।

(2) एक-तिहाई न्यायाधीशों की नियुक्ति कम से कम 10 वर्ष तक कम्पनी के संआश्रित कर्मचारियों में से व उस अवधि में कम से कम तीन वर्ष का जिला न्यायाधीश का अनुभव प्राप्त होगा।

(3) बाकी के न्यायाधीशों के पद निम्नलिखित में से भरे जाने थे–

(अ) ऐसे व्यक्ति जो सदर अदालतों या उच्चतम न्यायालय में कम से कम 10 वर्ष तक वकील रहे हों या

(ब) ऐसे व्यक्ति जो लघुवाद न्यायालयों में कम से कम 5 वर्ष तक न्यायाधीश रह चुके हों।

न्यायाधीशों का कार्यकाल ब्रिटिश सम्राट् की इच्छा पर निर्भर करता था।

(2) क्षेत्राधिकार से सम्बन्धित माँग–यह न्यायालय अभिलेख न्यायालय (Court of Record) थे। प्रत्येक उच्च न्यायालय को, दीवानी आपराधिक सामुद्रिक वसीयत, निर्वसीयत, विवाह आदि विषयक में मौलिक एवं अपीलीय क्षेत्राधिकार देने के प्रावधान थे। यह व्यवस्था भी की गई थी कि ब्रिटिश सम्राट् द्वारा समय-समय पर लेटर-पेटेन्ट जारी करके इन्हें क्षेत्राधिकार के बारे में निर्देशित कर सकता था। उच्च न्यायालयों को ब्रिटिश सम्राट् लेटर-पेटन्ट जारी करके अतिरिक्त या अनुपूरक शक्तियाँ भी प्रदान कर सकता था।

प्रत्येक उच्च न्यायालयों को वे समस्त क्षेत्राधिकार प्रदान किये गये थे, जो सदर अदालतों एवं उच्चतम न्यायालयों को प्राप्त थे, जिनके स्थान पर इनकी स्थापना की गई थी।

उच्च न्यायालयों को उन सभी न्यायालयों पर अधीक्षण (Supervision) का अधिकार प्राप्त था, जिनके निर्णयों से वे अपील सुनते थे।

इन न्यायालयों को अपने मौलिक तथा अपीलीय क्षेत्राधिकार के प्रयोग के लिए तथा अपने क्षेत्राधिकार में आने वाले सभी न्यायालयों की कार्यवाही को नियन्त्रित (Regulate) करने के लिए नियम बनाने का अधिकार प्रदान किया गया था।

ब्रिटिश सम्राट् को अधिकार था कि प्रिवी कौन्सिल के पूर्व अनुमोदन से ब्रिटिश भारत के किसी भी क्षेत्र में जहाँ उच्च न्यायालय की स्थापना नहीं की गई हो, वहाँ उच्च न्यायालय की स्थापना कर सकता था तथा प्रत्येक उच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार पुन: स्पष्ट या निर्धारित कर सकता था।

इस अधिनियम द्वारा यह भी प्रावधान किया गया था कि उच्च न्यायालयों को महाराज्यपाल द्वारा बनायी गयी विधियों को तथा उन विधियों को जो पूर्व के उच्चतम न्यायालयों द्वारा लागू की जाती थीं जो इस अधिनियम के प्रावधानों के विपरीत नहीं हो, को मानने के लिए बाध्य थे।

3. लेटर-पेटेन्ट द्वारा दिये गये क्षेत्राधिकार–

(1) दीवानी क्षेत्राधिकार–

(i) साधारण मौलिक क्षेत्राधिकार–प्रत्येक उच्च न्यायालय को सम्बन्धित प्रेसीडेन्सी नगर में क्षेत्र पर साधारण मौलिक क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत सभी 100 रु. से अधिक मूल्यांकन वाले दीवानी वादों को निर्णीत करने का अधिकार था। 100 रु. तक के मूल्य के वादों को निर्णीत करने का अधिकार लघुवाद न्यायालयों को दिया गया था।

मौलिक क्षेत्राधिकार के लिए आवश्यक शर्तें–

(क) विवाद प्रेसीडेन्सी नगर क्षेत्र में उत्पन्न हुआ हो।

(ख) प्रतिवादी प्रेसीडेन्सी के सीमा क्षेत्र में रहता हो, व्यापार करता हो या व्यक्तिगत रूप से किसी लाभ कार्य से जुड़ा हुआ हो।

(ग) क्षेत्र में स्थित भूमि तथा अचल सम्पत्ति के विवाद।

मौलिक क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत वादों में उच्च न्यायालय द्वारा वही विधि लागू की जाती थी, जो न्यायालय के स्थापना के पहले उच्चतम न्यायालय द्वारा लागू की जाती थी।

(ii) असाधारण मौलिक अधिकार–असाधारण मौलिक अधिकार उच्च न्यायालय को अधिकार दिया गया था कि वह अपने अधीनस्थ न्यायालयों से किसी भी वाद को हस्तान्तरित करने तथा अपने पास परीक्षण के लिए मंगा सकता था, यदि–

(क) इससे न्याय हो सकेगा या

(ख) दोनों पक्ष ने ऐसा करने की सहमति दे दी हो।

(ग) यदि एक से अधिक वादों के तथ्य समान हो तो उन्हें एक करने का क्षेत्राधिकार न्यायालय को था।

असाधारण मौलिक क्षेत्राधिकार की स्थिति परिस्थितियों के अनुसार विशेष निर्देशों पर निर्भर थी।

(iii) अपीलीय क्षेत्राधिकार–उच्च न्यायालयों को ऐसे वादों में अपील सुनने का अधिकार दिया गया था।

(क) अधीनस्थ दीवानी न्यायालयों के निर्णयों से उच्च न्यायालय को अधिकार था कि उसके अधीनस्थ जिला–न्यायालयों से आने वाली अपीलों को सुन सकता था। इन अपीलों की सुनवाई उन्हीं क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत की जाती थी जिसके अन्तर्गत सदर दीवानी अदालत एवं उच्चतम न्यायालय द्वारा की जाती थी।

(ख) उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के निर्णय से अपील

(ग) डिवीजनल न्यायालय से अपील

(घ) उच्च न्यायालय तथा डिवीजनल न्यायालय के दो या अधिक न्यायाधीशों के निर्णय से अपील यदि निर्णय बहुमत से नहीं हो पाया हो या पक्ष तथा विपक्ष में न्यायाधीशों की संख्या बराबर हो।

(iv) अन्य क्षेत्राधिकार–उच्चतम न्यायालयों के क्षेत्राधिकार की तरह उच्च न्यायालयों को भी पागलों, अवयस्कों के मामलों से सम्बन्धित दिवालिया, कर्जदारों से सम्बन्धित अधिकार, वसीयत निर्वसियत तथा विवाह सम्बन्धित क्षेत्राधिकार दिये गये थे।

(v) अपील–दीवानी वादों में वाद मूल्य दस हजार से अधिक होने पर अपील प्रिवी कौन्सिल को की जा सकती थी।

(2) आपराधिक क्षेत्राधिकार–

(i) साधारण मौलिक क्षेत्राधिकार–उच्च न्यायालयों को प्रेसीडेन्सी नगर के निर्धारित क्षेत्र के अन्दर होने वाले आपराधिक मामलों में तथा सीमा क्षेत्र से बाहर रहने वाले व्यक्तियों पर क्षेत्राधिकार दिया था, जो उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत आते थे।

(ii) असाधारण मौलिक क्षेत्राधिकार–दीवानी असाधारण मौलिक क्षेत्राधिकार की तरह उच्च न्यायालय को आपराधिक मामलों में भी असाधारण मौलिक क्षेत्राधिकार दिये गये थे। यह क्षेत्राधिकार ऐसे व्यक्तियों पर दिये गये जो सदर फौजदारी अदालत के क्षेत्र में थे।

किसी भी अधीनस्थ न्यायालय से आपराधिक वादों का परीक्षण भी उच्च न्यायालय द्वारा किया जा सकता था जो एडवोकेट जनरल द्वारा प्रस्तुत किये हो या जिला सेशन जज द्वारा भेजे गये हों।

(iii) आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार–उच्च न्यायालय अपने अधीनस्थ आपराधिक अदालतों के निर्णय की अपील सुन सकता था।

(iv) आपराधिक मामलों के स्थानान्तरण का अधिकार–

(v) अपील–उच्च न्यायालय से आपराधिक वादों के निर्णय की अपील प्रिवी कौंसिल को नहीं की जा सकती थी।

(1) आपराधिक वादों के निर्णयों से अपील उच्च न्यायालय के साधारण मौलिक क्षेत्राधिकारों में निर्णीत वादों से प्रिवी कौन्सिल को की जा सकती थी।

(2) उन वादों के निर्णय से जिसमें साधारण मौलिक क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए किसी न्यायालय द्वारा विधि का कोई प्रश्न उच्च न्यायालय के मत के लिए आरक्षित किया हो तथा उच्च न्यायालय ने प्रिवी कौन्सिल में अपील के लिये प्रमाण-पत्र दे दिया हो।

(3) उच्च न्यायालय से अपीलीय क्षेत्राधिकार में दिये गये निर्णयों से अपील प्रिवी कौन्सिल में विशेष अनुमति प्रदान करने पर की जा सकती थी।

उच्च न्यायालय को निर्देश दिया गया कि वे आपराधिक मामलों में भारतीय दण्ड संहिता में दी गई विधि का प्रयोग करे तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों का अनुसरण करे।

(3) निरीक्षण क्षेत्राधिकार–प्रत्येक उच्च न्यायालय को अपने सभी अधीनस्थ न्यायालयों पर निरीक्षण का अधिकार दिया गया। उनसे कार्यवाहियों का रिकार्ड माँग सके। उच्च न्यायालय अपने अधीनस्थ किसी भी न्यायालय से वादों को लम्बित अपील को अन्य अधीनस्थ न्यायालय को हस्तान्तरित कर सकता था।

उच्च न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों के लिए कार्य-प्रणाली तथा प्रक्रिया के सम्बन्धित नियम बनाने का अधिकार दिया गया था।

(4) सामुद्रिक क्षेत्राधिकार–उच्चतम न्यायालय को दीवानी, आपराधिक एवं युद्ध के दौरान मामलों में प्राप्त सभी सामुद्रिक क्षेत्राधिकार, उच्च न्यायालय को भी दे दिये गये।

(5) अन्य प्रावधान–

(i) उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश मामलों के निर्णय, विशेष आयोग या चल न्यायालयों के द्वारा कर सकते थे।

(ii) उच्च न्यायालयों को सभी कागज, बयान एवं रिटर्न सुव्यवस्थित तरीके से सरकार के माँगे जाने पर प्रस्तुत करना आवश्यक था।

(iii) मुख्य न्यायाधीश न्यायालय प्रशासन एवं डिक्री निष्पादन के लिए आवश्यक कर्मचारियों की नियुक्ति सरकार के अनुमोदन पर कर सकता था।

(iv) वकील, एडवोकेट, एटर्नी की नियुक्ति का या अनुमोदन करने का भी अधिकार उच्च न्यायालय को दिया गया। इन्हें हटाने का अधिकार भी न्यायालय को था।

(v) लेटर-पेटेन्ट के किसी भी प्रावधान में परिवर्तन एवं संशोधन करने का क्षेत्राधिकार भारतीय विधान सभा को दे दिया गया।

सन् 1861 के भारतीय उच्च न्यायालय अधिनियम दोहरी न्याय व्यवस्था को पूर्ण रूप से समाप्त करने में सफल नहीं हो सका। उच्चतम न्यायालय एवं सदर अदालतों की प्रक्रियाओं और लागू की जाने वाली विधियों में समानता नहीं होने से यह एकीकरण सफल नहीं हो पाया। उच्च न्यायालय अपने मौलिक अधिकारों में उच्चतम न्यायालय द्वारा अपनाई जाने वाली अंग्रेजी विधि का प्रयोग करता था तथा अपील के मामलों में सदर अदालतों की संख्या साम्य, सद्विवेक एवं न्याय के सिद्धान्तों, व्यक्तिगत विधियों तथा सरकारी विनियमों की विधि को लागू करता था।

न्यायिक प्रक्रिया में भी अन्तर था। मौलिक अधिकार में अंग्रेजी प्रक्रिया संहिता का तथा अपीलीय क्षेत्राधिकार में भारतीय प्रक्रिया संहिताओं का प्रयोग किया जाता था। परिणामस्वरूप दोनों न्याय व्यवस्थाओं का अवशेष बनकर रह गया था उच्च न्यायालय।

भारतीय उच्च न्यायालय अधिनियम 1861 के अन्तर्गत स्थापित उच्च न्यायालय

सभी उच्च न्यायालय एक ही तिथि पर स्थापित नहीं किये जा सके थे–

(i) कलकत्ता उच्च न्यायालय–मई सन् 1862 में ब्रिटिश सम्राट् ने प्रथम राजपत्र जारी किया जिससे जुलाई, 1862 में कलकत्ता उच्च न्यायालय की स्थापना की गई।

(ii) मद्रास एवं बम्बई उच्च न्यायालय–जून, 1862 में दूसरा राजपत्र जारी किया गया। बम्बई में 14 अगस्त, 1862 में तथा मद्रास में 15 अगस्त, 1862 में उच्च न्यायालय स्थापित किया गया। इस राजपत्र में क्षेत्राधिकार परिभाषित एवं स्पष्ट नहीं दिये गये थे इसलिए सन् 1865 में संशोधित राजपत्र जारी किया गया। इसके प्रावधानों के अनुसार उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार का निर्धारण उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की सहायता से सपरिषद् महाराज्यपाल द्वारा आवश्यक परिवर्तन या संशोधन किया जा सकता था। ब्रिटिश सम्राट् को अधिकार था कि ऐसे क्षेत्राधिकार के निर्धारण को स्वीकार कर दे।

(iii) आगरा उच्च न्यायालय–सन् 1866 में स्थापित किया गया व सन् 1875 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के रूप में स्थानान्तरित कर दिया गया।

भारतीय उच्च न्यायालय अधिनियम, 1911

इस अधिनियम के द्वारा सन् 1861 के अधिनियम में परिवर्तन किया गया।

(i) सन् 1861 के अधिनियम में अधिकतम न्यायाधीशों की संख्या मुख्य न्यायाधीश के अतिरिक्त 15 थी। इस अधिनियम के द्वारा यह संख्या मुख्य न्यायाधीश सहित 20 हो सकती थी।

(ii) सन् 1911 के अधिनियम के अन्तर्गत ब्रिटिश सम्राट् किसी भी क्षेत्र में उच्च न्यायालय स्थापित कर सकता था चाहे वे क्षेत्र प्रेसीडेन्सी के बाहर के हों या किसी उच्च न्यायालय क्षेत्राधिकार में आते हों।

सन् 1861 के अधिनियम के अन्तर्गत उच्च न्यायालय की स्थापना उन्हीं क्षेत्रों में की जा सकती थी, जो किसी उच्च न्यायालय के क्षेत्र में नहीं आते हों।

(iii) सन् 1911 के अधिनियम के अन्तर्गत प्रावधान किया गया कि दो वर्ष तक के लिए महाराज्यपाल अतिरिक्त न्यायाधीश नियुक्त कर सकता था।

(iv) इस अधिनियम के अन्तर्गत भारत सरकार को निर्देश दिये गये कि उच्च न्यायालय के सभी न्यायाधीशों के वेतन भारत के राजस्व निधि से देय होगा।

❑❑❑